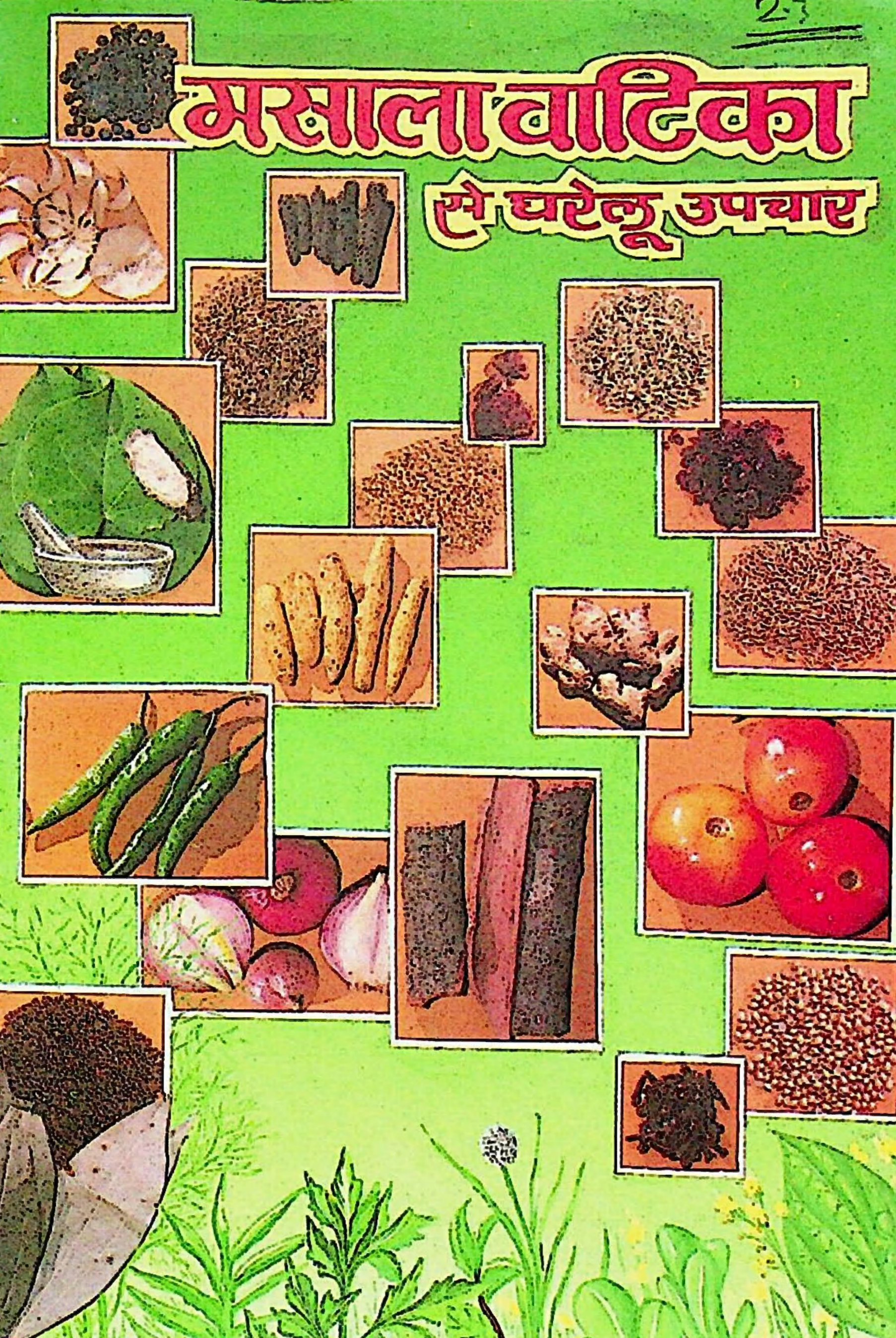


मसाला वाटिका

से घरेलू उपचार

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना
गायत्री तपोभूमि, मथुरा

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

मूल्य : ३.०० रुपया

सन् २००४

मुद्रक :
युग निर्माण योजना प्रेस
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मसाला वाटिका से घरेलू उपचार

भोजन के समय दाल, शाक आदि में मिलाये जाने वाले मसालों में से अधिकांश ऐसे होते हैं, जिसमें किसी न किसी रोग के निवारण की क्षमता भी है। कई मसालों को एक साथ मिला देने पर उनसे रुचिकर स्वाद बनता है; पर औषधि की दृष्टि से उस सम्मिश्रण का प्रभाव गुणहीन हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह औषधि के स्थान पर प्रयोग करने योग्य भी नहीं रह जाते।

मसालों को समान्यतया स्वादवर्धक एवं पाचक माना जाता है। उनका आम प्रयोग-प्रचलन इसी रूप में है; पर उन्हें निरापद घरेलू चिकित्सा के रूप में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

अच्छा हो अपने घर-आँगन में या जहाँ भी उपयुक्त जगह हो, एक-दो क्यारी मसालों, औषधियों को बो लिया जाए। वे हर ऋतु में बने रह सकते हैं। खाद-पानी, धूप-हवा का ध्यान रखा जाए, तो मसालों को हर मौसम में उपजाया जा सकता है। कुछ महीने सभी हरीतिमाओं के लिए अनुकूल पड़ते हैं और कुछ सामान्य। यह स्थानीय भूमि एवं वातावरण पर भी बहुत कुछ निर्भर है। इसकी जानकारी पास-पड़ोस वालों अथवा सब्जी उगाने वालों से पूछ कर एकत्रित कर लेनी चाहिए। अधिक मात्रा में उगाने और अच्छी फसल लेने के लिए यह जानकारी विशेष काम आती है। अन्यथा साज-संभाल रखने पर मसालों के पौधे हर महीने बोये और काम में लाए जा सकते हैं।

मसालों में हल्दी, सौंफ धनिया, अजवाइन, राई, अदरक (सोंठ) जैसी वस्तुएं भोजन में अतिरिक्त रूप से मिलाई जाती हैं। नमक, मिर्च तो नित्य ही प्रयुक्त होते हैं। इसीलिए उनका अतिरिक्त गुण देखने को नहीं मिलता। नशेबाज रोज तम्बाकू आदि पीते रहते हैं; फिर वह उनकी आदत में शुमार हो जाती है। छोटे बच्चों को मिर्च खिलाई जाय तो, वह रोने लगेगा। इसी प्रकार नमक की अधिक मात्रा भी असह्य होती है, किन्तु

एक बार उसका अभ्यास पड़ने पर कोई विशेष प्रतिकूल परिणाम तत्काल नहीं होता । यहाँ 'अति' की चर्चा करना जरूरी है । 'अति' से जन्म लेने वाले कष्ट एवं रोग जब पथ्य की माँग करते हैं, तब मसालों की महत्ता मालूम पड़ती हैं । नमक या मिर्च का हृदयघात, अपच, पेप्टिक-अल्सर, गुर्दे की बीमारियों में जब निषेध कर दिया जाता है, तब अनुभव होता है, कि वे किस प्रकार दैनन्दिनचर्या का एक अंग बन गये थे । अति से हर औषधि विष बन जाती है । मसाले भी अपवाद नहीं हैं । बाजार में पुराने घुन लगे, अशुद्ध सूखे मसाले लेने से अच्छा यही है कि उन्हें ताजा घर में ही उगा लिया जाय । अपवाद रूप में कुछ ही ऐसे हैं, जो ताजे प्राप्त नहीं किये जा सकते-खनिज या अन्य स्रोतों से उपलब्ध होते हैं । घरेलू शाक-वाटिका जिस प्रकार आँगन में, छत पर, छप्पर पर गमलों, पेटियों और घड़ों के टूटे पेंदों में, टूटी टोकरियों या कनस्तरों में लगाकर खड़ी कर ली जाती है, उसी प्रकार मसाले बनाने के लिए भी घरों में या उनके आस-पास ही जगह तलाश की जा सकती है । जमीन का बड़ा टुकड़ा उपलब्ध हो, तो उन्हें अलग-अलग छोटे-छोटे टुकड़ों में बोया जा सकता है ।

हर मसाले में भी कितने ही विटामिन, खनिज तथा दूसरे उपयोगी रासायनिक तत्त्व होते हैं । इसलिए उनमें से जो रुचिकर हो, उनका चयन कर चटनी बनाई जा सकती है, उसे भोजन के साथ खाया जा सकता है । यह तो हुई रसोई को स्वादिष्ट या गुणकारी बनाने की विधा; पर समय-कुसमय, यदि कोई रोग-विकार उठ खड़ा हो तो उसकी प्राथमिक चिकित्सा हेतु इन मसालों में से जो उपयुक्त हों, उन्हें चुनकर प्रयोग में लाया जा सकता है । इस प्रकार एक ही कार्य से कई प्रयोजन सधते हैं । भोजन का स्वादिष्ट होना, उसमें कुपोषण निवारक गुणकारी तत्त्वों का समावेश होना, घर में सुगन्धित वातावरण रहने से चित्त प्रसन्न रहना और कृमि-कीटकों का सहज पलायन होते रहना । इन गुणों को देखते हुए इस निष्कर्ष पर सहज ही पहुँचा जा सकता है कि घरेलू शाकवाटिका आन्दोलन की तरह छोटी मसाला बाड़ियाँ भी घरों में उगाई

जानी चाहिए। साथ ही यह अनुभव भी होना चाहिये कि कौन मसाला वनस्पति किस रोग में काम आ सकती है और उसकी मात्रा कितनी होनी चाहिए। यों तो ये भारतीय परिवार संस्था पद्धति में घरेलू नुस्खों के रूप में चिर प्रचलित औषधियाँ हैं, फिर भी मात्रा एवं प्रयोग की शास्त्रोक्त-विज्ञान सम्मत जानकारी हर दृष्टि से उपयोगी है।

अनुमान के लिए जो मिश्रण परस्पर किया गया है, उसकी बात अलग है, पर चिकित्सा प्रयोजन में कई मसाले एक साथ न मिलना अधिक अच्छा है। एक ही वस्तु का प्रयोग करने से वह अपना पूरा गुण दिखा पाती है। मिश्रण करने से कई गुण एक साथ मिल जाने पर घपला हो जाता है। एक पदार्थ दूसरे पदार्थ के गुण बढ़ा भी सकता है और ऐसा भी हो सकता है कि कोई तीसरा प्रभाव उत्पन्न हो जाय। लाल, पीला, नीला रंग न्यूनाधिक मात्रा में मिलने पर अनेक प्रकार के नये रंग बन जाते हैं। यही बात एलोपैथी की औषधियों पर भी लागू होती है। यही वनस्पतियों के बारे में भी है कि उन्हें मिला देने पर वे अपने मूलभूत गुणों से वंचित हो जायें और कोई अन्य प्रकार का ऐसा गुण उत्पन्न कर लें, जो इच्छित प्रयोजन पूरा न करके कुछ अन्य ही प्रकार का नया अवसर उत्पन्न कर दे। इसलिए चिकित्सा प्रयोजन में यह ध्यान रखा जाय कि एक बार में एक ही वनस्पति का प्रयोग हो। चटनी की बात दूसरी है। उसमें स्वादों की विविधता से उत्पन्न एक नये जायके का रसास्वादन करने की बात बनती है; पर चिकित्सा प्रयोजन नें ऐसा करना उपयुक्त नहीं होगा।

मसाले स्वयं उगायें :- मसाले आम तौर से बाजार से खरीदे जाते हैं। पीसने के झंझट से बचने के लिए उन्हें आमतौर से पिसी हुई शक्ल में खरीदा जाता है। साबूत या पिसी हुई दोनों ही स्थितियों में इनमें मिलावट की जाती है। चालाक दुकानदार इस व्यवसाय में अच्छा-खासा मुनाफा कमाते हैं और ऐसी चीजें मिला देते हैं, जो देखने में तो पकड़ में नहीं आतीं, पर खाने के उपरान्त स्वास्थ्य को भारी हानि पहुँचाती हैं। इनका परीक्षण बहुमूल्य मशीनों व सुयोग्य विशेषज्ञों द्वारा

ही संभव होता है, जिसकी व्यवस्था हर किसी के लिए संभव नहीं ।

जिस प्रकार हर खाद्य पदार्थ की शुद्धता आवश्यक है, उसी प्रकार यह भी आवश्यक है कि मसालों पर और भी अधिक कड़ी नजर रखी जाय, क्योंकि वे अधिक प्रभावी तथा अधिक संवेदनशील होते हैं । इसीलिये बोलचाल में इन्हें गरम मसाला कहा जाता है । इसके साथ मिलावटें प्राय: बाजारों में की जाती हैं । वे ऐसी होती हैं, जिनमें पैसा भी जाता है और विषैला प्रभाव भी गले बँधता है । अस्तु उचित है कि मसालों को, मेहनत बचाने के लिये पिसा हुआ लेने के बजाय, न केवल घर पर पीसा जाय, बल्कि उगाया भी जाय । अन्यथा राई के साथ कटहली बीज, जीरे के साथ बुहारी कचरा, धनिया के साथ चावल का छिलका जैसी वस्तुयें मिली रहने की जोखिम बनी रहती है ।

मसाले अपनी देख-रेख में उगाये जाने पर ही उनकी शुद्धता, प्रामाणिकता पर विश्वास किया जा सकता है । विशेषतया तब, जबकि उनका उपयोग चिकित्सा प्रयोजनों में भी किया जाता है ।

आयुर्वेद के ग्रन्थों पर दृष्टि डालते हैं, तो हम पाते हैं कि मसाले रूप में प्रचलित हर औषधि, बहु गुणकारी, भूख बढ़ाने वाली एवं अनेक रोगों को नाश करने वाली है । दैनन्दिन जीवन में प्रयुक्त होने के कारण हम दुर्भाग्यवश उनका महत्त्व नहीं जान पाते, पर गहराई से विवेचन करें, तो हम पाते हैं कि भारतीय भोजन पद्धति कितनी दूरगामी नीतियों को सामने रखकर ऋषि-मनीषियों द्वारा निर्धारित की गई थी ।

मसाला औषधि वाटिका में प्रयुक्त की जा सकने वाली औषधियाँ इस प्रकार हैं :- (१) राई, (२) हल्दी, (३) अदरक, (४) सौंफ, (५) मेंथी, (६) जीरा, (७) मिर्च, (८) पुदीना, (९) पिप्पली, (१०) गिलोय, (११) तुलसी, (१२) अजवाइन, (१३) धनिया, (१४) टमाटर, (१५) लहसुन, (१६) ग्वारपाठा, (१७) प्याज, (१८) आँवला ।

अन्य औषधि मसाले :- (१९) सुहागा, (२०) हींग, (२१) काला नमक, (२२) लौंग, (२३) तेजपत्रक, (२४) दालचीनी ।

अन्तिम ६ ऐसी हैं, जो घर में तो नहीं उगाई जा सकतीं या वे खनिजों से प्राप्त होती हैं, पर इनका प्रचलन मसालेदान में बहुधा होता है, अत: उनकी उपयोगिता को जानते हुए शुद्ध रूप में औषधि प्रयोजन हेतु घर में रखना चाहिए ।

इन सब का विभिन्न रोगों में प्रयोग गुण-धर्म, लगाने या प्राप्ति की विधि, मात्रा एवं अनुपान का संक्षिप्त वर्णन यहाँ प्रस्तुत है ।

(१) राई - सरसों की बिरादरी में ही इसकी गणना होती है । इसका दाना छोटा और काला होता है । तेल भी कम निकलता है, इसलिए तेलहन विक्रताओं के यहाँ यह नहीं मिलती । उसे पंसारी ही बेचते हैं, क्योंकि उनका प्रमुख उपयोग मसाले की तरह होता है । इसकी दाल पीस ली जाय, फिर पानी में डाला जाय, तो पानी खट्टा हो जाता है । कांजी-बड़े मूंग-उड़द दाल से बनते हैं; पर उन्हें राई के पानी में फुलाया और साथ-साथ खाया जाता है ।

राई का प्रमुख गुण पाचक है । खटाई पैदा करने का गुण होने से वह स्वादिष्ट भी है । पेट में नन्हें कीड़े पड़ जाने पर इसके पानी से कीड़े मर जाते हैं । हैजे में राई पीस कर पेट पर लेप करने से उदरशूल व मरोड़ में आराम मिलता है ।सभी अचारों में राई डाली जाती है । उससे वे सड़ते भी नहीं और खटाई लिए हुए अपना स्वाद भी बनाये रहते हैं । इसी प्रकार दाल-शाक में अन्य मसालों के साथ इसका भी उपयोग होता है ।

दर्द या सूजन मिटाने का उसमें गुण है । इसकी पुल्टिस बनाकर यदि दर्द वाली जगह में सेंक किया जाय, तो तुरन्त राहत मिलती है । बाह्योपचार में राई का लेप सूजन कम करने वाला माना जाता है । गरम पानी में राई डालकर सहने योग्य तापमान तक बना लिया जाय, इतने में राई फूल जाती है और पानी में उसका असर हो जाता है । इस पानी को किसी टब में कमर की ऊँचाई तक भरा जाय और उसमें टबबाथ की तरह बैठा जाय तो प्रदर, प्रमेह आदि यौन रोगों के सुधार में इसका बहुत अच्छा प्रतिफल निकलता है ।

राई या सरसों के तेल, में बारीक नमक मिलाकर, उससे मंजन का काम लिया जाय, तो दाँतों तथा मसूढ़ों की मजबूती व सफाई होती रहती है।

विष विकार में चूर्ण एक से दो चम्मच की मात्रा में दिया जाता है; ताकि वमन के द्वारा विष बाहर निकल जाय। राई का औषध प्रयोजन हेतु कम मात्रा में उपयोग ही लाभकारी है। इसे पीसकर शहद में मिलाकर सूँघने से जुकाम मिटता है। मात्र राई पीस कर सूँघने या तेल सूँ घने से मिर्गी-मूर्च्छा दूर होती है। कान के फोड़े फुन्सी व बहरेपन में राई का तेल कान में डालते हैं। राई पीस कर अरण्डी के पत्तों में चुपड़ कर जोड़ों पर लगाने से संधियों की सूजन मिटती है।

राई अग्निदीपक, पाचक, उत्तेजक एवं पसीना लाने वाली बड़ी गुणकारी औषधि है।

(२) हल्दी :- इसका आकार भी अदरक जैसा होता है। पौधे की एक-एक फुट की चौड़ी पत्तियाँ होती हैं। पीले रंग के फूल वर्षा के दिनों में बड़े सुहावने लगते हैं। हल्दी के चूर्ण का उबटन किया जाता है। दाल शाक को पीला रंग देने के लिए हल्दी डालना शोभा भी बढ़ाता है, सुगन्ध भी देता है और गुणकारी भी होता है। खाज, खुजली, फुन्सी आदि में उसका सेवन उपयोगी रहता है। गहरी चोट लग जाने पर हल्दी का चूर्ण दूध के साथ पिलाते हैं। अलसी तेल, नमक और हल्दी की पुल्टिस बनाकर सूजन, दर्द एवं चोट वाले स्थानों की सिंकाई की जाती है। हल्दी रक्त शोधक भी है। शरीर पर फुन्सियाँ उठने, चकत्ते जैसी पित्ती उछलने में हल्दी को शहद के साथ मिलाकर चाटते रहने की प्रथा है। पेट में कृमि पड़ने पर हल्दी का क्वाथ बनाकर पिलाया जाता है। खाँसी आने पर हल्दी के टुकड़े मुंह में पड़े रहने दिए जायँ और उन्हें धीरे-धीरे चूसते रहा जाय, तो लाभ होता है। जुकाम, सर्दी, सिर दर्द, दाँत दर्द में भी उसके उपयोग से लाभ होता है।

आयुर्वेद के अनुसार हल्दी उष्ण, सौन्दर्य बढ़ाने वाली,

रक्तशोधक, कफ-वात नाशक, पित्त शामक एवं लीवर के लिए उत्तेजक मानी गई है। सर्दी लगने पर हल्दी की धूनी दी जाती है। सिरदर्द व साइनुसाइटिस में हल्दी गुनगुने जल के साथ लेने से बलगम निकलता व सिर हल्का होता है। मूत्र रोगों में इसका काढ़ा बहुत आराम देता है। आँखों के दुखने पर एक तोला हल्दी, १ पाव पानी में औंटाकर, कपड़े से छानकर आँखों में टपकाते हैं, तो लाली जल्दी मिटती है। प्रमेह में हल्दी के चूर्ण को आँवले के रस के साथ देते हैं। इसकी प्रयोग मात्रा किसी भी रोग में दो माशे से अधिक नहीं होनी चाहिए। अनुपान प्रायः गुनगुना जल, दूध या मधु होता है।

बाजारू हल्दी में ऊपर से नकली रंग पोता जाता है; ताकि ग्राहक को आकर्षक लगे। पर यह रंग हानिकारक पाये गये हैं। इसलिए बिना रंग की हुई हल्दी प्राकृतिक रूप में लेनी चाहिए। पिसी हल्दी में पीली मिट्टी मिलाकर उसका वजन भारी कर दिया जाता है। इस प्रकार के मिश्रण खाने वाले को अनेक प्रकार की हानियाँ पहुँचती हैं। इसलिए घर पर उगाई और पीसी गई हल्दी का उपयोग ही उचित है।

(३) **अदरक** - अदरक गीली गाँठ है, जो जमीकन्द की तरह जमीन में गड़ी-गड़ी बढ़ती रहती है। उसमें से जितनी आवश्यकता है, काटकर शेष भाग को फिर जमीन में गाड़ा और भविष्य के लिए बढ़ते रहने दिया जाता है। यही अदरक जब सुखा लिया जाता है, तब सोंठ बन जाता है। बोने के लिए इसके टुकड़े काट-काट कर ही गाड़ दिये जाते हैं। इसमें बीज नहीं होता।

अदरक पाचक है। पेट में कब्ज, गैस बनना, वमन, खाँसी, कफ जुकाम आदि में इसे काम में लाया जाता है। नमक मिली चटनी बनाकर चाटते रहने, बारीक न पीस सके, तो टुकड़े मुँह में डालकर चूसते रहने से लाभ होता है। बच्चों के लिए रस के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। अदरक का रस और शहद मिलाकर चाटते रहने से दमा, श्वास, खाँसी से लेकर क्षय रोग तक सुधार होता है। हिचकी, जमुहाई का अनुपात बढ़

जाय, तो भी इसका प्रयोग किया जा सकता है । दाढ़ के दर्द में भी इसका सेवन उपयोगी है ।

अदरक और सोंठ के गुण एक जैसे होते हैं, पर जब चूर्ण में उसका प्रयोग करना हो, तो सोंठ लेना ही उपयुक्त है । उसमें अदरक की तरह बार-बार पीसने का झंझट नहीं रहता ।

अदरक भोजन के कुछ पूर्व लेने से अग्नि प्रदीप्त करती है, भूख बढ़ाती है । इसमें दोनों गुण हैं; आँतों की प्रवाही स्थिति में ग्राही भी है एवं कब्जियत को भेदने का गुण भी इसमें है । यह आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध योग त्रिकुटा (सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली) का एक प्रधान अंग है । अदरक का ताजा रस मूत्र निस्तारक (डायुरेटिक) औषधि माना गया है ।

विषम ज्वर में गो दुग्ध के साथ डेढ़ माशे की मात्रा में, हृदय रोग में कुनकुने क्वाथ के रूप में, हिचकी में आँवला व पीपल का चूर्ण शहद के साथ, पक्षाघात में सेंधा नमक के साथ महीन पीस कर सुँघाने के रूप में, अजीर्ण में धनिये के साथ क्वाथ बनाकर, संग्रहणी (डिसेन्ट्री) में कच्चे बेल का गूदा, अदरक एवम् गुड़ मिलाकर मट्ठे के साथ पीने से तथा सोंठ और गोखरू का क्वाथ प्रात: पीने से पीठ व कमर के दर्द में आराम पहुँचता है ।

(४) **सौंफ** - सौंफ शीतल प्रकृति की औषधि है । उसके फल जीरे से मिलते जुलते हैं । उन्हीं को काम में लाया जाता है । पान, सुपारी, इलायची की जगह सौंफ को अतिथि सत्कार के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिए । गर्मी के दिनों में ठंडाई पीने का प्रचलन है । उसमें सौंफ प्रमुख है । उसकी मात्रा भी अधिक रखी जाती है । स्वाद में मीठी और सुगन्धित होने के कारण वह सर्वप्रिय भी है, सस्ती भी ।

जिन रोगों में गर्मी की अधिकता का प्रभाव दृष्टिगोचर होता हो, उनमें सौंफ का प्रयोग बेखटके किया जाता है । डंठलों के तिनके जैसे प्राय: जुड़े रहते हैं, उन्हें हटाने के लिए उनकी धुलाई-मिजाई की जा सकती है । हथेलियों से भी रगड़ा जा सकता है । तवे पर हल्की आग से भून

लेने पर भी जुड़े हुए तिनके अलग हो जाते हैं । इतना कर लेने पर सौंफ का उपयोग थोड़ी-थोड़ी मात्रा में मुँह में डालते हुए पान की तरह चबाकर किया जा सकता है । सिल पर चटनी की तरह बारीक पीसकर शहद या चीनी के साथ मिलाकर चाटा जा सकता है । सौंफ को बारीक कूटकर उसे पानी में भिगोया जाए, ऊपर से पानी निथारते रहा जाए । पानी सुखाकर अन्त में जो गाढ़ा सा तलछट बच जाए-उसे सुखा लिया जाए, यही सौंफ का सत है । इसी प्रकार गिलोय आदि का भी सत निकालते हैं, सत्व को हमेशा कम मात्रा में लेते हैं ।

आगुर्वेदिक मत से सौंफ चरपरी अग्नि दीपक, वात, ज्वर एवं शूलनाशक तथा तृष्णा, वमन को शान्त कर देने वाली औषधि है । यह पेशाब की जलन कम करती है । यह आँतों की मरोड़ शान्त करती है एवं श्रेष्ठ अम्ल, पित्त नाशक है । सौंफ को घी में तला जाए व मिश्री के साथ मिलाया जाए, तो अतिसार (डायरिया) मिटाता है । बेल के गूदे के साथ चूर्ण खाने से अजीर्ण मिटता है । सौंफ के बीज, गुलाब के फूल, कमल गट्टे की मगज, चन्दन चूर्ण, खस, काली-मिर्च, छोटी इलायची, खरबूजे का बीज व बादाम आदि में से जो उपलब्ध हो, उन्हें मिलाकर पीसकर ठण्डाई बनायी जाती है, जो मेधावर्धक भी है एवं लू, पित्त, ज्वर, हैजा, दस्त दमन की श्रेष्ठ औषधि भी ।

(५) मेथी - मेथी के पत्ते का तो अच्छा शाक या सूखी भुजिया बनती है; किन्तु उसके बीज मसाले के काम आते हैं । भिगोने से वे फूल जाते हैं । छिलका उतारने पर कड़वाहट तो कम हो जाती है; किन्तु साथ ही गुण भी कम हो जाते हैं । इतने पर भी उसका गर्मी प्रधान गुण छिलके सहित या छिलके रहित स्थिति में अपना काम करता है । मेथी के बीजों की पतली दाल, तली हुई भुजिया बन सकती है । घी शक्कर के साथ उसके लड्डू भी बन सकते हैं । औषधि प्रयोग में उसके बीजों का चूर्ण काम में लिया जा सकता है । ऐसा भी हो सकता है कि उबाल-छान कर उसके पानी को गुनगुनी स्थिति में पिया जाए ।

मेथी गठिया जैसे रोगों में विशेष रूप से काम आती है। जकड़न सूजन में भी उससे लाभ होता है। जुकाम-सर्दी के अतिरिक्त ब्रहुमूत्र जैसे रोगों पर भी उससे अंकुश लगता है, भूख खुलती है और अपच दूर होता है। मेथी में जनवरी-मार्च में पुष्प फल लगते हैं। छोटी मेथी का उपयोग ही शाक-सब्जी में होता है।

मेथी आयुर्वेद के मतानुसार मूलतः वात नाशक है। नाड़ियों की दुर्बलता में भी इसका प्रयोग करते हैं। प्रसव के बाद स्तनों से दूध आने व हारमोन्स की नियमितता के लिए मेथी मोदक खिलाने का प्रावधान भारतीय परिवारों में है। दुर्बलता, शरीर में पीड़ा, थकान में यह टॉनिक का काम करती है। मेथी का पंचाग भी प्रयुक्त होता है एवं बीज चूर्ण भी । १ से ३ ग्राम की मात्रा में बीजों से सब्जियों में छौंक देते हैं। मेथी-दाने की सब्जी को लोग बड़े शौक से खाते हैं।

(६) जीरा - जीरा पाचक और सुगन्धित है। अरुचि, पेट फूलना, अपच आदि को दूर करने में उसका अच्छा प्रभाव देखा गया है। भुने हुए जीरे की सुगन्ध सूँघते रहने से जुकाम की छीकें आना बन्द होता है। रुका हुआ जुकाम खुल जाता है। प्रसूति के उपरान्त सेवन करने से गर्भाशय का कचरा साफ हो जाता है। साथ ही स्तनों में दूध भी बड़ी मात्रा में उतरता है।

मुखमार्जन में जीरे का अपना उपयोग है। भुना जीरा भोजन के उपरान्त थोड़ी मात्रा में मुँह में डाल लिया जाए, तो पाचक स्राव बहना आरम्भ हो जाते हैं और भोजन के समय की गयी जल्दबाजी से भोजन में मुख स्रावों की कमी रह जाती है, उसकी पूर्ति होती है। जीरे की प्रकृति गरम है; इसलिए उसे गरम मसालों में प्रयुक्त किया जाता है। जीरा वमन ला सकता है और पतले दस्त में गाढ़ापन आ जाता है।

आयुर्वेदिक मतानुसार जीरा गरम, रुचि बढ़ाने वाला, अग्निदीपक, विषनाशक एवं पेट के अफारे को दूर करने वाला है। जठराग्नि को प्रदीप्त करने के अलावा यह कृमि नाशक है एवं ज्वर

निवारक भी । जीर्ण ज्वर में यह लाभ देता है । जीरे को उबाल कर उस पानी में स्नान करने से खुजली मिटती है । बवासीर में इसे मिश्री के साथ मुखमार्ग से देने व पानी के साथ पीसकर मस्सों में लेप करने शान्ति मिलती है । पथरी व जननेन्द्रिय के रोगों में भी उसका मिश्री की चासनी के साथ सेवन किया जाता है । जीरे व नमक को पीसकर घी व शहद में मिलाकर थोड़ा गरम करके बिच्छू के डंक पर लगाने से विष उतर जाता है । जीरे का चूर्ण दही में मिलाकर खिलाने से अतिसार मिटता है । प्रयोग हेतु मात्रा, बीज चूर्ण ४ से ६ ग्राम तक की है । अनुपान मिश्री , गुड़ या मधु, रोगों के अनुरूप निर्धारित किया जाता है ।

(७) मिर्च - मिर्चों की दो जातियाँ प्रधान रूप से पायी जाती हैं । एक काली मिर्च, दूसरी हरी मिर्च । हरी मिर्च पक जाने पर पौधे पर ही लाल हो जाती है और सुखाने पर तो उसका रंग लाल हो ही जाता है ।

काली मिर्च महँगी भी है और उसे हर जगह उगाया नहीं जा सकता । उसके लिए उपयुक्त मौसम और फसल होनी चाहिए । इसलिए इतने झंझट में न पड़कर जिन्हें जरूरत पड़ती है, वे बाजार से ही खरीद लेते हैं ।

गरम मसाले का दाल-शाकों में ऊपर से भी बुरकने का भी रिवाज है । उसमें लौंग, काली मिर्च, पीपल, तेजपत्र, दालचीनी, हींग आदि का प्रयोग होता है; पर उनके उगाने में बहुत झंझट है । इसलिए उन्हें भी किसी प्रामाणिक दुकान से खरीद कर आवश्यकतानुसार काम चलाना चाहिए । इनकी प्रयोग विधि का वर्णन भी आगे किया गया है ।

सुलभ उत्पादन में हरी मिर्च क़ाम आती है । वह भी मध्यम स्तर की ही लेनी चाहिए । एक छोटे आकार की मिर्च अत्यन्त कड़वी होती है । एक छोटे बैंगन या करेले आकार की होती है, उसे शाक की तरह प्रयुक्त किया जाता है । औषधि वर्ग में तो मध्यवर्ती हरी मिर्च ही काम में लाई जाती है ।

मिर्च का स्वाद चटपटा और गुण दाहकारक है । जलन उत्पन्न करने के लिए जहाँ भी उसकी आवश्यकता समझी जाती है, वहाँ प्रयोग कर लिया जाता है । छोटी-छोटी फुन्सियाँ उठने पर उन पर लेप देने से वे जल जाती हैं । खाज, खुजली के लिए मिर्च को तेल में जलाकर उसकी मालिश की जाती है । जोड़ों के दर्द में भी उसकी मालिश की जाती है । कुत्ते के काट लेने या बर्र, ततैया आदि के डंक मार देने पर मिर्च पीस कर लगा देने से वह स्थान झुलस जाता है और विषैले असर से छुटकारा मिल जाता है । मकड़ी कुचल जाने पर भी चमड़ी पर मवाद वाले छोटे दाने उठ जाते हैं, उन पर भी मिर्च पीसकर लगाने से काम चल जाता है ।

हरी मिर्च मुख मार्ग से कम मात्रा में ली जानी चाहिए । वैसे कम मात्रा में यह अग्नि दीपक है, इसलिए छौंक आदि में इसका प्रयोग घरों में होता है । थोड़ी मात्रा में बढ़ने पर वह अम्ल पित्त का कारण बन जाती है ।

(८) पुदीना - पुदीने का स्वाद और सुगन्ध प्रसिद्ध है, वह घास-की तरह किसी भी क्यारी में उपजाया जा सकता है । कुछ महीनों को छोड़कर वह सदा हरा रहता है । उसमें एक विशिष्ट गन्ध आती है, जो इसके तैलीय सत्व के कारण होती है, जिससे पिपरमेन्ट बनती है । पुदीना का रायता, पुदीने की चटनी का प्रचलन प्रसिद्ध है ।

पुदीने का गुण शीतल है । उसे लू लगने, सिर दर्द होने जैसी परिस्थितियों में ठंडाई की तरह बनाकर पिया जा सकता है । मुँह के छाले या मसूड़े के दर्द में उसे गरम पानी में मिलाकर कुल्ले करने से आराम मिलता है । यह मुख दुर्गन्ध नाशक भी है । जिन दिनों हरा पुदीना नहीं मिलता, उन दिनों उसके सूखे पत्ते या डंठल भी लाभ दे जाते हैं ।

चूर्ण-चटनी बनाने वाले पुदीने की प्रधानता रखते हैं । चासनी के सहारे उसका शरबत भी बनाया जा सकता है और गर्मी के दिनों में जलपान-आतिथ्य की तरह काम में लाया जा सकता है ।

पुदीना हैजे की दवा है। अर्क पुदीना के रूप में इसका उपयोग, जी मचलाना, अफारा, अतिसार, बवासीर आदि में होता है। शरीर को सुगठित बनाने के लिए उसका लेप या उबटन भी किया जा सकता है।

हृदय की दुर्बलता, लो ब्लडप्रेशर में यह उपयोगी है। हिचकी एवं श्वास रोगों में भी इसे प्रयुक्त करते हैं। ज्वर तथा उसके बाद दुर्बलता में भी इसे प्रयुक्त करते हैं। पत्रों का ताजा स्वरस ५ से १० मिली लीटर (१ से २ चम्मच), फाण्ट ४ से ८ चम्मच व तैल १ से ३ बूँद की मात्रा में प्रयुक्त करते हैं।

(९) पिप्पली - छोटी पिप्पली, बड़ी पिप्पली इन दो किस्मों में यह काम में लाई जाती है। घरेलू प्रयोजन हेतु गरम मसालों में, औषधि उपचार में छोटी पिप्पली, पीपर या लेंडी पीपल का ही उपयोग है। इसकी लता फैलती है और वर्षों तक रहती है। फल छोटे शहतूत की शक्ल का होता है। इसी का प्रयोग किया जाता है। सूखने पर फल काले हो जाते हैं। वर्षा में फूल और शरद ऋतु में फल आते हैं। इसकी जड़ में भी फल जैसे गुण होते हैं। उसे पीपलामूल कहते हैं। इसकी बेल को किसी आधार के सहारे बढ़ाया जाता है। जमीन पर फैलने में कठिनाई है।

पिप्पली पौष्टिक है और पाचक भी। प्रातः दूध और शहद के साथ लें, तो बलवर्धक है। बच्चों की पसली चलने पर भुनी पीपल का जरा सा चूर्ण शहद में मिलाकर खिलाया और लगाया भी जा सकता है।

जिगर बढ़ना, तिल्ली बढ़ना, अफारा, अपच, वमन, अजीर्ण आदि में तथा श्वास, खाँसी में भी लाभदायक है। जुकाम, आधा सीसी में भी इसे दिया जा सकता है। ज्वर राजयक्ष्मा में भी लाभदायक है। वायु गोला, हिस्टीरिया में भी इसका उपयोग लाभदायक होता है। अतिसार; संग्रहणी बवासीर में भी पीपली का उपयोग किया जा सकता है।

आयुर्वेद के मतानुसार पिप्पली अग्निदीपक बलवर्धक रसायन,

उष्ण चरपरी, वात-कफनाशक मानी गई है। पिप्पली, सोंठ, कालीमिर्च के साथ "त्रिकुटा" का महत्त्वपूर्ण घटक है। सोंठ के चूर्ण व गुड़ के साथ इसे लेने पर आमशूल, अजीर्ण और सूजन दूर होती है। पिप्पली को नीम के रस में उबालकर नासिका मार्ग से देने पर अपस्मार रोग में लाभ होता है। इसके काढ़े में शहद मिलाकर पीने से जीर्ण वात-कफजन्य ज्वर दूर होता है। पिप्पली की प्रमुख क्रिया फेफड़ों व गर्भाशय पर होती मानी गई है। फेफड़ों के व्रण, पुरानी खाँसी, तपेदिक में यह बहुत लाभकारी है। प्रसूति में देरी हो रही हो (यूटेराइन इनर्शिया) तो पीपला मूल, चित्रक मूल की जड़ें व हींग को पान में रखकर देने से प्रसूति क्रिया तुरन्त सम्पन्न होने लगती है। मलेरिया ज्वर यकृत्-प्लीहा वृद्धि को यह मिटाती है। पक्षाघात एवं शियाटिका रोग में भी यह लाभकारी है। पेट के सभी प्रकार के कृमि इसके सेवन से मर जाते हैं। मिश्री के साथ इसका १ ग्राम की मात्रा में सेवन हिचकी मिटाता है। पिप्पली व बच का चूर्ण सम मात्रा में जल के साथ लिया जाए, तो आधा सीसी का दर्द मिटता है। रसायन प्रयोजन हेतु वर्धमान पिप्पली का प्रयोग होता है, जिसमें दस दिन तक क्रमशः ३-३ फल बढ़ाते व बाद में कम करते हुए इसका प्रयोग किया जाता है। चूर्ण की मात्रा एक ग्राम से अधिक नहीं की जानी चाहिए। मधु, मिश्री एवं गुड़ श्रेष्ठ अनुपान है।

(१०) गिलोय (अमृता) - यह बेल पेड़ पर चढ़ाई जाती है और चिरकाल तक स्थिर रहती है। इसके लिए बड़े पेड़ का आश्रय चाहिए। नीम पर चढ़ाई जा सके तो सर्वोत्तम है। गिलोय के डंठल काम में आते हैं। कोपलें भी प्रभावशाली होती हैं। जितना टुकड़ा आवश्यक हो, उसे ऊपर से काटना चाहिए। नीचे तने की ओर से काट लेने पर तो ऊपर का सारा भाग सूख जाता है।

गिलोय को पानी में पीसकर ठण्डाई जैसी बना लेनी चाहिए। यों उसे पंसारी सुखाकर भी टुकड़ों में बेचते हैं। गिलोय का सत भी निकालते हैं, पर अधिक अच्छा यही है कि उसे गीली स्थिति में ही लिया

जाय, चटनी या ठण्डाई के रूप में ही प्रयुक्त किया जाय । उसे एक बार या आवश्यकतानुसार प्रातः -सायं दो बार भी लिया जा सकता है ।

गिलोय को रामबाण स्तर की संजीवनी बूटी माना गया है । इसके गुण प्रायः तुलसी से ही मिलते-जुलते हैं । यह पुराने ज्वरों को तोड़ती है । राजयक्ष्मा को जड़ से उखाड़ती है । रक्तचाप, हृदय रोग एवं मधुमेह के लिये असाधारण सिद्ध होती है । गिलोय बलवर्धक है । वह प्रमेह, स्वप्नदोष व नपुंसकता आदि में भी अपना प्रभाव प्रस्तुत करती है । यह हानिरहित औषधि है ।

गिलोय घी के साथ वात को, शक्कर के साथ पित्त को, शहद के साथ कफ को एवं सोंठ के साथ आमवात को दूर करती है । इसका ज्वर शामक गुण किसी भी एण्टीबायोटिक से कई गुना बढ़कर है । तुलसी बनफसा के साथ इसको मिलाकर लेने पर जीर्ण ज्वर में तुरन्त लाभ होता है । जलोदर (ऐसाइटिस) , कामला, पीलिया में यह चमत्कारी लाभ पहुँचाती है । क्षय रोग में ढाई तोला गिलोय का सत्व छोटी पिप्पली के एक ग्राम चूर्ण के साथ प्रातःकाल पिलाया जाता है । सर्प विष में इसकी जड़ का रस या काढ़ा काटे हुए स्थान पर लगाया जाता है, आँखों में डाला जाता है एवं आधे-आधे घण्टे में पिलाया जाता है । गिलोय एक मेधा-वर्धक औषधि है, मस्तिष्क विकारों में बड़ी उपयोगी है एवं एक रसायन है । हरी स्थिती में गिलोय की मात्रा १० से २५ ग्राम व सूखी गिलोय की मात्रा ४ से ६ ग्राम । सत्व की मात्रा आधे से दो ग्राम तक मानी गई है । सर्वश्रेष्ठ अनुपान मधु है ।

(११) तुलसी : सब रोगों की एक ही औषधि के रूप में तुलसी ख्याति प्राप्त वनस्पति है । तुलसी की दो किस्में पायी जाती हैं-एक वह, जो पूजा-अर्चा में प्रयुक्त होती है । दूसरी वह जिसके बड़े और काले पत्ते होते हैं । फल काले एवं गुच्छेदार होते हैं । इसमें कीटाणु नाशक गुण विशेष है । इसका तेल बनाया और लेप लगाया जाता है । खुजली, दर्द, छाजन, बर्र, बिच्छू आदि के काटे में काम आती है । हल्दी में मिला हुआ

उबटन करने से शरीर की गंध दूर होती है, मुँहासे दूर होते हैं तथा जुएँ मरते हैं। इसकी गंध से मच्छर, खटमल तथा कृमि-कीटक भागते हैं।

पूजा में काम आने वाली तुलसी के अनेक गुण हैं। उससे घर का वातावरण शुद्ध होता है। धार्मिक तथा अध्यात्म भावनाओं को पोषण मिलता है। अनेक रोगों में अनुपान भेद से उसका उपयोग किया जा सकता है। अनुपान का तात्पर्य है, उन पदार्थों का थोड़ा सा सम्मिश्रण जो औषधि का प्रभाव तो बढ़ाते हैं, साथ ही हानि रहित हैं। जैसे बुखार में तुलसी को गिलोय के साथ और खाँसी में पान, अदरक के साथ दिया जा सकता है। इस तरह जिस प्रकार की व्यथा हो, उसी के अनुसार तुलसी के पत्ते, पानी या अन्य अनुपान के साथ पीसकर पिलाये या चटाये जा सकते हैं। वयस्क के लिए दस पत्ते और छोटे बच्चों के लिए पाँच पर्याप्त माने जाते हैं। तुलसी को शत रोग निवारक भी कहते हैं। वह प्राय: हर रोग में प्रयुक्त हो सकती है: अनुपान द्रव्य को मूल औषधि की तुलना में एक-एक तिहाई या चौथाई लेना चाहिये। पीने-चाटने से पूर्व उसे इतना बारीक कर लेना चाहिये कि वह आसानी से गले के नीचे उतारा जाय। कंठ में अड़चन उत्पन्न न करे, दाँतों में उलझे नहीं।

तुलसी ज्वर नाशक तो है ही, शीत प्रधान रोगों में यह विशेष रूप से काम में ली जाती है। सन्धियों की सूजन में इसे अपामार्ग व निर्गुण्डी के साथ देते हैं। यह कृमिनाशक व वायु नाशक है। तुलसी के बीज का हिम जीरा, दानेदार शक्कर व दूध के साथ देने पर मूत्रदाह, मूत्रपिण्ड की पथरी में लाभ होता है। शरीर के सफेद दागों व मुँहासों में तुलसी का रस, नीबू का रस व काली कसौंधी का रस धूप में रखकर गाढ़ा बनाकर चेहरे पर लगाया जाता है। तुलसी के पत्तों का काढ़ा मासिक धर्म के बाद तीन दिन तक नियमित लिया जाय, तो गर्भ नहीं रहता। इस रूप में एक श्रेष्ठ, सिद्ध गर्भ निरोधक है। अतिसार में तुलसी पत्रों का फाण्ट, जायफल का चूर्ण मिलाकर दिया जाता है। अड़ूसे के रस के साथ तुलसी का स्वरस देने पर पुरानी खाँसी व दमा मिट जाता

है । वस्तुत: तुलसी सर्व रोग नाशक संजीवनी बूटी है ।

(१२) अजवाइन - इसे छोटी अजमोद भी कहते हैं । १ से ३ फुट ऊँचा इसका पौधा सारे भारत में होता है । फरवरी से अप्रैल के मध्य में फूल तथा बाद में फल पकते हैं : फलों में एक सुगन्धित तैलीय द्रव्य होता है, जो अजवाइन का क्वाथ बनाने पर उड़ जाता है । इसी कारण अजवाइन का कभी क्वाथ नहीं बनाया जाता । चूर्ण १ से ३ ग्राम, तैल १ से ३ बूँद, सत्व ३० से १२० मिली ग्राम एवम् अर्क २० से ४० मिली लीटर की मात्रा में प्रयुक्त होता है ।

अजवाइन कफ-वात शामक एवम् पित्त वर्धक है । अजवाइन का लेप या उसके तैल की मालिस सूजन और दर्द वाले विकारों में करते हैं । सत अजवाइनों को गरम जल में मिलाकर घावों को साफ करना, एण्टीसेप्टिक घोल से साफ करने से भी बढ़कर है । पेट में दर्द होने, फूलने की स्थिति में पेट पर उसकी पोटली बनाकर सेंकते हैं । यह मंदाग्नि को प्रदीप्त करती, भूख बढ़ाती, अजीर्ण, अपच एवम् उदरशूल मिटाती है । हुकवर्म में सत अजवाइन लाभकारी है । जीर्ण खाँसी एवम् श्वास रोग में इसका चूर्ण देते हैं, एवम् धूम्रपान कराते हैं । जमा हुआ बलगम निकलता है, दुर्गन्ध नष्ट होती है । जीवाणु वृद्धि को भी यह रोक कर एण्टीबायोटिक की भूमिका निभाती है । श्वास का दौरा भी इसके प्रयोग से कम हो जाता है ।

कष्ट से होने वाले मासिक धर्म एवं प्रसूति के बाद अजवाइन को दिये जाने की महत्ता घर-घर में प्रचलित है । यह गर्भाशय का संशोधन करती है तथा ज्वर मिटाती है । गर्भाशय के आस-पास प्रजनन संस्थान में होने वाले रोग (पी० आई डी०) इसके प्रयोग से नष्ट होते हैं । अफीम की लत जिसे हो, उसे अजवाइन का प्रयोग नियन्त्रित मात्रा में कराने पर इसका अभ्यास छूट जाता है । शीत के साथ आने वाले वायरस ज्वरों में अजवाइन का प्रयोग लाभकारी है । अजवाइन मसालेदान का एक महत्वपूर्ण घटक है एवं शुद्ध स्थिति में बड़ी गुणकारी औषधि है ।

(१३) धनिया - १ से ३ फीट ऊँचा इसका पौधा सारे भारत में पाया जाता है। फल सफेद या बैंगनी होते हैं । फूल गोलाकार, पीले-भूरे होते हैं, जो दबाने पर दो भागों में बँट जाते हैं, जिनमें एक-एक बीज होता है। शीत ऋतु के अन्त में फूल और फल होते हैं। इसे घणा या कौथमीर भी कहते हैं। सारे भारत में हरी हालत में चटनी बनाने के काम में व सूखी हालत में मसाले में डालने के काम आता है।

आयुर्वेद मतानुसार यह चरपरा, कसैला, उष्णवीर्य, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है। पाचक एवम् ज्वर नाशक भी है। तीनों दोषों को यह शमन करता है। फलों का चूर्ण ३ से ६ ग्राम , हरे पचांग हिम २० से ४० मिली लीटर , तैल १ से ३ बूँद तक प्रयुक्त होता है।

हरी धनिया की पत्ती पीसकर सिद दर्द तथा अन्य सूजनों पर इसका लेप करते हैं : मुँह के छालों या गले के रोगों में हरे धनिया के रस से कुल्ला करते हैं। नेत्रों की सूजन व लाली में धनिया को कूटकर पानी में उबाल कर, उस पानी को कपड़े से छानकर आँखों में टपकाने से दर्द कम होता है, लाली मिटती है एवम् पानी जाना बन्द हो जाता है। पत्तों का स्वरस नाक से नकसीर फूटने पर डालते ही रक्त आना बन्द हो जाता है।

धनिया का छिल्का उतारकर उसी मज्जा (मिगी) को दूध में उबाल कर उसे दूध का सेवन मूर्छा या मतिभ्रम में करते हैं। यह प्यास, अरुचि, वमन, अग्निमन्दता, अजीर्ण एवम् उदरशूल को मिटाता है। गर्मी की वजह से पेट में होने वाले दर्द में धनिया के चूर्ण को मिश्री के साथ देते हैं। दस्त लगने पर भुना हुआ धनिया पीसकर खिलाते हैं। अगर दस्तों के साथ खून आता है, तो धनिया को पानी में भिगोकर पीस-छानकर पीना चाहिये।

बुखार में देने से, साथ जुड़े कष्ट यथा तृष्णा, वमन, सिर दर्द शान्त होते हैं। कामोन्माद को शान्त करने के लिये भी धनिया को पानी में भिगोकर दिया जाता है। बच्चों की खाँसी में धनिया को चावल के

माँड़ में घोंट कर पिलाते हैं: गर्भावस्था की उल्टी में धनिया के काढ़े में मिश्री मिला कर देते हैं : पागलपन, मिर्गी, हिस्टीरिया, उन्माद को यह जल्दी ही शान्त कर देता है ।

(१४) **टमाटर** - टमाटर का आम उपयोग शाकों में होता है । इसमें खटाई की मात्रा अधिक रहती है । इसलिये आम, इमली आदि के स्थान पर उसे काम में लाया जाना सस्ता भी पड़ता है और सुलभ भी । उसमें नीबू से मिलते-जुलते गुण पाये जाते हैं । नारंगी का मज्जा भी उसमें मिल सकता है ।

टमाटर पाचक है, स्वादिष्ट तो है ही । पेट के रोगों में उसका उपयोग भली प्रकार किया जा सकता है । जी मिचलाना, डकारें आना, पेट फूलना, मुँह के छाले, मसूढ़ों के दर्द जैसे रोगों में टमाटर का सूप बनाकर दिया जा सकता है, उसमें अदरक, काला नमक आदि भी मिला लिया जाय, तो यह स्वादिष्ट भी बन जाता है और गुणकारी भी ।चाय, काफी के स्थान पर यदि एक-एक या आधा-आधा कप कई बार दिन में लिया जाय, तो उससे स्फूर्ति भी मिलती है और पेट की सफाई होती है ।

टमाटर की कई किस्में हैं, उसमें से कोई न कोई हर महीने उगाई जा सकती है । गुणों की दृष्टि से वे लगभग समान हैं । टमाटर की चटनी शाक का काम भी देती है और उदर रोगों में उपचार का भी ।

टमाटर का सेवन शरीर की स्थूलता, उदर रोग, अतिसार अपेण्डिसाइटिस में बड़ा लाभकारी पाया गया है । टमाटर में लोहे का परिमाण अन्य वनस्पतियों-फलों की तुलना में अधिक है । यह रक्ताल्पता की एक अच्छी औषधि है: इसके विटामिन साधारण अग्नि से नष्ट नहीं होते । बेरी-बेरी, गठिया व एक्जिमा में इसका सेवन लाभप्रद है । ज्वर के बाद की कमजोरी को यह मिटाता एवं मधुमेह के रोग के लिये सर्वश्रेष्ठ पथ्य है ।

(१५) **ल्हसुन** - लहसुन प्याज की बिरादरी का है, पर उससे कहीं अधिक तीक्ष्ण एवं गरम है । इसकी मात्रा थोड़ी ही ली जाती है ।

गन्ध भी उससे तीव्र होती है । यह उत्तेजक है । चाय काफी की तरह लहसुन खाने से भी उत्तेजना आती है । उससे नपुंसकता जैसे रोग दूर होते हैं । गले में घेघा फूल जाने की स्थिति में लहसुन का उपयोग लाभदायक सिद्ध होता है ।

लहसुन कच्चा नहीं खाया जाता । उसे किसी खाद्य पदार्थ में मिलाकर खाते हैं, ताकि गन्ध एवं तीक्ष्णता हल्की पड़ जाय । लहसुन को मेवा एवं मावा मिलाकर उसकी कतली व लड्डू भी बनाये जाते हैं । उनका सेवन जाड़े के दिनों में उत्तम है । गर्मी के दिनों में अधिक लहसुन खाने से जलन होने लगती है । प्यास की बढ़ोत्तरी हो जाती है । आमाशय की झिल्ली कड़ी होने एवं अल्सर में लहसुन का उपयोग अच्छा है । दाँत का दर्द, मसूढ़े फूलने पर लहसुन को पीसकर, उसकी धीरे-धीरे मालिस करनी चाहिये ।

लहसुन को तिल्ली के तेल में पकावें । एक पाव तेल में आधी छटाक लहसुन पीसकर धीमी आग पर पकने दें । लहसुन जब काला पड़ जाय, तो उसे छान लें । यह लहसुन का तेल तैयार हो गया । कान के दर्द में इसकी कुछ बूँदें डालकर रुई से बंद कर देना चाहिये । इस प्रकार कई दिन प्रयोग करने से कान में फुंसी भी उठी हो तो, वह साफ हो जाती है । जमा हुआ मैल भी फूलकर निकल जाता है, और उसे सलाई के सहारे बाहर निकाल देने से कान साफ हो जाता है । बहरापन बढ़ रहा हो, तो उसमें भी इसके प्रयोग से लाभ होता है ।

जोड़ों के, रीढ़ के दर्द में लहसुन के तेल की मालिस की जा सकती है । चमड़ी में पंजा गड़ाकर बैठने वाली छोटे किस्म की जुएँ भी इसकी मालिस से मर जाती हैं । उठते हुए फोड़ों पर लहसुन की पुल्टिस बाँधने से वह जल्दी पक कर फूट जाता है या बैठ जाता है । हैजा में पीने के लिये लहसुन के साथ उबला पानी देने से आराम होता है ।

मुख मार्ग से देने से श्वास व डकार में दुर्गन्ध आने के कारण इसका बाह्य प्रयोग ही बहुधा अपने उपचार में मान्यता प्राप्त है ।

लहसुन को पीसकर छाती पर लेप करने से, फेफड़ों की पुरानी बीमारी--राजयक्ष्मा में कफ जल्दी निकलता है ।सभी प्रकार के घावों, सूजन आदि के लिये यह एक श्रेष्ठ एण्टीसेप्टिक है । सारे वात रोग, संधि शोथों में उसके तेल की मालिस करते हैं । खुजली में लहसुन की कली को पीसकर राई के तेल में गरम कर उस तेल से मालिस करते हैं । बाह्य प्रयोग में यह ध्यान रखना चाहिए कि यह एक बहुत ही तीव्र जलन करने वाली चर्मदाह औषधि है ।अधिक समय तक लेप करने पर छाला उठ सकता है ।

अंतरंग प्रयोग में इसका हृदय रोगों में (कोरोनरी नलिकाओं में रक्तावरोध) एवम् कोलेस्ट्राल को घटाने हेतु, फेफड़ों के क्षय एब्सेस आदि में प्रयोग तो अब वैज्ञानिक दृष्टि से प्रमाणित है एवम् उसके तेल की 'गार्लिक पर्ल्स' भी बाजार में उपलब्ध है । इसकी तीक्ष्ण गंध, तामसिक वृत्ति एवम् उत्तेजक गुण वाला होने के कारण, जहाँ इसके सेवन को उचित न समझा जाय, वहाँ बाह्य प्रयोग तो किया ही जा सकता है ।

(१३) ग्वांरपाठा (घृतकुमारी) - तुलसी, गिलोय की तरह यद्यपि ग्वांरपाठा, जिसे घी कुंवार भी कहते हैं, मसाला तो नहीं है, पर आँगनवाड़ी लगाते समय उसे भी लगा देना चाहिये । अपने ढंग की घरेलू दवा तो है ही । उसकी प्रकृति गर्म मानी जाती है एवं शक्तिवर्धक भी । सामान्य उपयोग में इसका गूदा ही आता है, जो छिलके के साथ मजबूती से चिपका रहता है । उसे चाकू से ही अलग करना पड़ता है ।

घी-तेल में तलकर मसाले डालकर उसे शाक की तरह भी खाया जा सकता है और घी आटे में मिलाकर लड्डू, कतरी भी बना सकते हैं । उसे आहार की तरह सीमित मात्रा में प्रयोग किया जा सकता है । प्रसव के उपरान्त जननी को भी पेट की सफाई के लिये खिलाया जाता है । पेट के रोगों में विशेष रूप से काम में आता है । उसकी पुल्टिस दुखने वाले स्थानों पर बाँधी जाती है । पेट दर्द, सिर दर्द आदि में उसकी लुगदी बाँध देने से लाभ होता है ।

फेफड़ों की सूजन, श्वास रोग, तिल्ली, जिगर तथा गुर्दे की बीमारियों में इसका उपयोग लाभकारी है । घी कुंवार के रस को सुखाकर एक पदार्थ बनाया जाता है, जिसे एलुआ या मुसम्बर कहते हैं । वह नरम व पारदर्शी होता है । यह मज्जावर्धक कामोत्तेजना देने वाला, कृमि नाशक एवं विष निवारक माना गया है । सारे शरीर के मल शोधन हेतु घीकुंवार एक श्रेष्ठ औषधि है । जठराग्नि को यह प्रदीप्त करता है एवं हर प्रकार की खाँसी, लीवर के रोगों में आराम पहुँचाता है । यह चर्म रोगों में भी आराम पहुँचाता है । चर्म रोगों में यह रक्तशोधन की भूमिका निभाता है । पेट में इसकी प्रधान क्रिया बड़ी आँत एवम् उत्तर गुदा (एनौरेक्टल जक्शन) पर होती है । घीकुंवार का गूदा ६ माशा, गाय का घी ६ माशा, हरड़ चूर्ण एक माशा व सेंधा नमक एक माशा मिलाकर खाने से वायु गोले से हुआ पेट दर्द मिट जाता है । रक्त प्रदर, श्वेत प्रदर एवम् हर प्रकार के प्रजनन अंगों की बीमारी में प्रयोग लाभकारी है । रजोरोध होने पर मासिक धर्म के समय से एक सप्ताह पूर्व से इसका सेवन आरम्भ कर देना चाहिये ।

पत्र का स्वरस मात्रा में १९ से २० मिली लीटर (२ से ४ छोटे चम्मच) एवम् एलुआ चूर्ण १/२ग्राम तक की मात्रा में देते हैं ।अधिक मात्रा से देने पर मरोड़ के साथ दस्त आने लगते हैं ।अतः मात्रा का ध्यान हर स्थिति में रखा जाना चाहिये, विशेष रूप से सूखे एलुआचूर्ण के संबंध में ।

(१७) प्याज - यह आहार एवं शाक भाजी के रूप में प्रयुक्त होता है । इसकी तामसिक प्रवृत्ति उष्णवीर्य एवम् तीक्ष्ण गुण होने के कारण कई वर्ग इसके सेवन का निषेध करते हैं, केवल बाह्योपचार में प्रयुक्त करते हैं ।

आयुर्वेदिक मतानुसार प्याज बलकारक, कफ पित्त नाशक, वमन दोष हरने वाली औषधि है । कफ निकालने के लिये यह एक उत्तम औषधि है । आँतों की क्रिया शक्ति को बढ़ाकर दस्त साफ लाने में एवम्

बवासीर में इसका प्रयोग किया जाता है । यह ऋतु स्राव में नियमितता लाता है । ब्रोकांइटिस, लीवर के विभिन्न रोगों एवं कष्टयुक्त मासिक धर्म में इसका प्रयोग होता है ।

बाह्योपचार में वेदना निवारक एवं शोथ मिटाने वाला गुण होने के कारण, इसे संधियों की सूजन-व्रण शोथ में चटनी रूप में गरम करके बाँधते हैं । प्याज का रस व राई का तेल मिलाकर मलने से गठिया रोग की पीड़ा कम होती है ।

दाद और खुजली में इसके रस का लेप किया जाता है । नाक से नकसीर फूटने पर प्याज का रस टपकाते हैं । कान के दर्द, फुंसी में प्याज के बीच का भाग गरम कर रखते हैं अथवा ताजे प्याज का रस गरम करके कान में टपकाते हैं । लू में ताजे रस का सेवन तथा लेप सारे शरीर में करते हैं । प्याज का रस आँखों में लगाने से नेत्रों की पीड़ा मिटती है एवम् मसूड़ों पर लगाने से सूजन कम होती है । हल्दी के साथ पुल्टिस बनाकर लहसुन की तरह यह भी फोड़े पकाने व मुंदी चोटों की पीड़ा कम करने हेतु प्रयुक्त होता है। मधुमेह के कारबन्कल एवम् गिल्टियों में यह प्रयुक्त होता है । इसके रस को मसल कर लगाने पर बिच्छू के विष की पीड़ा कम होती है ।

(१८) **आँवला** - आँवला पेड़ वर्ग में गिना जाता है, पर उसके फल पौष्टिक और शोधक माने जाते हैं । रक्तविकार में काम आते हैं । सुखाकर रख लेने पर भी उसमें विटामिन "सी" पर्याप्त मात्रा में बना रहता है । यह नेत्र ज्योति बढ़ाने, मस्तिष्क मज्जा को बल देने में विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होता है । आँवले का चूर्ण बारीक पीसकर एक तोला पानी में भिगो दिया जाय, एवम् प्रातः काल उसे छानकर उस पानी से सिर धोया जाय, तो बालों की जड़ें, मजबूत होती हैं । जमी हुई रूसी झड़कर अच्छी तरह साफ हो जाती है ।

नीबू की तरह आँवले की खटाई भी स्वादिष्ट तथा गुणकारी है । उसमें आम, इमली जैसी खटाइयों से होने वाली विकृतियाँ उत्पन्न

नहीं होती । भुने या उबले आँवले का पानी बनाकर लू लगने की स्थिति में लिया जा सकता है ।

आँवला आमाशय की अम्लता को कम करता है; अतः अम्लपित्त (पैप्टिक अल्सर), १/२ से १ चम्मच चूर्ण की मात्रा में एण्टेसिड की तरह बड़ी सफलता से प्रयुक्त होता है । अनुपान जल होता है । मधु के साथ सबेरे शाम देने पर बवासीर में भी लाभ पहुँचाता है । यह एक श्रेष्ठ रसायन है, जिनका कायाकल्प में प्रयोग होता है । यह त्रिफला (आँवला, बहेड़ा, हरड़) का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो विरेचक के रूप में व आँखों के दोष मिटाने हेतु एवं रसायन रूप में प्रयुक्त होता है ।

अन्य औषध मसाले :- कुछ मसाले ऐसे हैं, जिन्हें न घर में अपनी शाक वाटिका में उगाया जा सकता है, न ही किसी अन्य विधि से बनाया ही जा सकता है । इनमें औषधीय प्रयोजन की दृष्टि से, घरेलू नुस्खों के रूप में प्रयुक्त होने वाले तीन मुख्य हैं - सुहागा, हींग, काला नमक । ये केमिकल समूह में आते हैं । तीन औषधियां जो विशिष्ट जलवायु में ही पैदा होती हैं, बड़े व्यापक पैमाने पर जिनका प्रयोग मसालों के रूप में होता है, बड़े सुगम रूप में मसाला उपचार में प्रयुक्त की जा सकती हैं-ये हैं - लौंग, तेजपत्रक, दालचीनी । इनका भी वर्णन किया जा रहा है; ताकि सर्वोपलब्ध इन मसालों से घरेलू उपचार का सिलसिला चल सके ।

(१९) सुहागा :- एक प्रकार का खनिज द्रव्य है एवं इसे टंकन बार भी कहते हैं । अंग्रेजी में इसे बोरेक्स नाम दिया गया है । यह सफेद रंग का गंध रहित रवेदार पदार्थ होता है, जिसे शोधन के बाद प्रयोग में लाया जाता है । शास्त्रोक्त पद्धति (शालिग्रामनिघण्टु) तो बड़ी पेचीदगियों से भरी है, पर 'सबसे सरल विधि अंगारे पर रखकर फूला पाड़ने की है । फिर यह शोधित सुहागा एक रोगनाशक दवा बन जाता है । इसका स्वाद नमकीन खारा होता है । आयुर्वेदिक मत से सुहागा अग्निवर्धक, खाँसी एवं श्वास को दूर करने वाला, ज्वर एवम् पेट के दर्द को दूर करने वाला

है। यह कृमि नाशक एवं विष नाशक है। मूत्र मार्ग से बाहर निकलते समय पानी व उत्सर्जित यूरिया पदार्थ की मात्रा बढ़ाता है। मूत्र की अम्लता इससे कम होती है। पेट में यह तुरन्त घुल जाता है एवं थोड़ी मात्रा लेने से हर प्रकार के कृमियों को निकाल बाहर करता है। गर्भाशय की संकुचन क्रिया को व मासिक धर्म परिणाम को भी यह बढ़ाता है।

विभिन्न रोगों में इसे प्रयोग करने की विधि इस प्रकार है :-

(क) मुँह के छालों में सुहागा के पानी से कुल्ला करने से वे तुरन्त मिटते हैं। पाँच रत्ती से लेकर एक माशा सुहागा आधे गिलास जल में मिलाकर प्रयुक्त होता है। जल औंटाकर कुल्ला कराया जाय, तो मुख व गले के मार्ग की सूजन मिट जाती है। काली मिर्च पीसकर साथ में लगाने पर मसूड़े के घाव तुरन्त भर जाते हैं।

(ख) मन्दाग्नि भूख न लगने की स्थिति में १/२ माशा फूला सुहागा एक कप गुन-गुने जल में दिन में दो या तीन बार देते हैं।

(ग) त्वचा की खुजली पर सुहागे का पानी लगाया जाता है। नीबू के रस में मिलाकर लगाने पर एक्जिमा को समाप्त करता है।

(घ) बच्चों की खाँसी में फुलाया सुहागा २-३ रत्ती की मात्रा में शहद या दूध के साथ देते हैं।

(च) मासिक धर्म की रुकावट, गर्भाशय की सूजन व दर्द में, सुहागे को एक माशे की मात्रा में जल के साथ मिलाकर देने से रुकावट मिटती व रक्त स्राव खुलकर होता है।

(छ) अण्डकोष के सूजन में दो रत्ती फूला सुहागा गुड़ के साथ प्रातः काल लेने पर तीन-चार दिन में आराम पहुँचाता है।

(ज) सर्पदंश या किसी भी प्रकार के स्थावर विषजन्य विकार की शांति हेतु सुहागा मिश्रित जल देते हैं अथवा डेढ़ तोला सुहागा घी में मिलाकर पिलाते हैं।

(झ) लगभग तीन तोला फूला सुहागा चार तोले शहद में मिलाकर प्रतिदिन लेने से दमा रोग मिटता है ।

(ञ) मुँह पर मुँहासों-झांई को मिटाने के लिए सुहागे को चन्दन के साथ पीसकर लेप लगाते हैं ।

(२०) हींग - वस्तुत: एक वृक्ष का दूध है, जो जमाकर गोंद की शक्ल ले लेता है । भारत में यह ईरान से आती है । इसे उग्रगन्धा या सहस्त्र वेधी भी कहते हैं ।

काली भूरी तीखी गन्ध वाली हींग सर्वश्रेष्ठ मानी गई है । यह छौंक आदि में भोजन में बड़े व्यापक स्तर पर प्रयोग की जाती है ।

आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार हींग पेट की अग्नि को बढ़ाने वाली, आमाशय व आँतों के लिए उत्तेजक, पित्तवर्धक, मल बाँधने वाली, खाँसी, कफ, अफारा मिटाने वाली एवं हृदय से संबंधित छाती के दर्द व पेट के दर्द को मिटाने वाली एक परीक्षित औषधि है । इसे अजीर्ण एवं कृमि रोगों में भी प्रयोग करते हैं । लीवर को यह शक्ति देती है एवं मस्तिष्कीय विकारों में भी इसका प्रभाव देखा गया है । हींग को देने से श्वास नलिका में जमा कफ पतला होकर निकल जाता है । हींग को शुद्ध कर के लिया जाता है । लोहे के पात्र में घी डालकर गर्म करते हैं । लाल होने पर उतार देते हैं । पेट का फूलना, दर्द, अपच एवं कृमि रोग में हींग २ से ६ रत्ती तक की मात्रा में अजवाइन व घीकुंआर के गूदे के साथ देते हैं । आँतों में अल्सर होने पर इसके पानी का एनीमा भी दिया जाता है ।

मलेरिया ज्वर में हींग व कपूर की मिली हुई बटी दी जाती है । एक तोला हींग व एक तोला कपूर, इन दोनों को शहद में घोंट कर रत्ती-रत्ती भर की गोलियाँ बनाकर दी जानी चाहिए । ज्वर के साथ सन्निपात की स्थिति होने पर हींग, कपूर व अदरक का रस मिलाकर जीभ पर लगा देने भर से आराम होने लगता है । छाती की धड़कन, हृदय शूल, घबराहट में एक रत्ती मावा में ली गयी हींग तत्काल लाभ देती है । हिस्टीरिया में इसे मस्तिष्क-उत्तेजक होने के नाते और स्नायु-तन्तुओं को बल पहुँचाने

वाले गुण के कारण दिया जाता है, जो निश्चित ही लाभ पहुँचाता है । काला नमक, अजवाइन व स्याहजीरा आदि के साथ यह सभी उदर रोगों में हिंग्वाष्टक चूर्ण के रूप में प्रयुक्त होती है । सर्पदंश में बताया जाता है कि हींग को नारियल के दूध में डुबाकर काटे हुए स्थान पर लगाया जाता है । निमोनिया, ब्राँकाइटिस, हूपिंग कफ (कुक्कुर खाँसी) में १ से ४ रत्ती की मात्रा में दी गई शोधित हींग बड़ी लाभकारी है । पेट के कृमियों के लिए भी इसका नियमित सेवन लाभप्रद है ।

(२१) **काला नमक** - सर्वोपलब्ध मसाले का एक महत्त्वपूर्ण अंग, यह लवण सांभर के साथ आँवला, सब्जी, सुहागा, पिया-वाँसा के पत्तों के सम्मिश्रण से बनाने के बाद उपलब्ध होता है । बाजार में यह सेंधा नमक की तरह ढेलों से मिलता है ।

काला नमक हिंग्वाष्टक चूर्ण का एक घटक है । यह हाजमे की शक्ति को बढ़ाता है, वायु मिटाता है; तथा पेट के फुलाव को दूर कर दस्त लाता है । भोजन के प्रति अरुचि, पेट में कृमि तथा उदर शूल में यह लाभकारी है । यह हृदय उत्तेजक है एवं हृदय रोगजन्य शूल में लाभप्रद पाया गया है । सुलेमानी नमक एवं वज्रक्षार के रूप में सम्मिश्रण से तैयार किये गये इसके चूर्ण आयुर्वेदिक नुस्खों में बहुधा प्रयुक्त होते हैं ।

घृतकुमारी, अजवाइन या हींग के साथ इसे उदर रोगों में लिया जाता है । वायु प्रधान रोगों में गरम जल के साथ एवं पित्त प्रधान रोगों में इसे घी के साथ देते हैं । रक्त विकार, सूजन, जलोदर, हृदय या लीवर जन्य शोथ में इसका प्रयोग किसी भी स्थिति में नहीं किया जाना चाहिए ।

गरम मसाले - विशिष्ट समशीतोष्ण जलवायु में पैदा होने वाली कुछ औषधियाँ ऐसी हैं, जिन्हें घर-आँगन में उगाया तो नहीं जा सकता, पर सूखे रूप में वे औषधि की दृष्टि से एवं मसालों के रूप में सर्वोपलब्ध है । लौंग, तेज पत्रक एवं दालचीनी की गणना इनमें प्रमुख रूप से की जाती है ।

(२२) **लौंग** :- अपने देश में जंजीबार से आती है । कुछ वर्षों

से दक्षिण भारत के समुद्री किनारों में सफलता मिली है। लौंग वृक्ष सुगन्धित होते हैं एवं इनके फलों की कलियों को ही लौंग कहा जाता है। वे ही लौंग लाभकारी होते हैं. जिनमें से तेल न निकाला गया हो।

लौंग चरपरी, अग्निदीपक, रुचि बढ़ाने वाली तथा कफ पित्त शामक है। खाँसी, श्वास, शूल एवं क्षय रोग में प्रयुक्त होती है और तृषा तथा वमन को दूर करती हैं। लौंग को दाँतों के दर्द में दन्तक्षय व केवीटीज में प्रयुक्त किया जाता है, यह सभी जानते हैं। पाचन क्रिया पर इसका सीधा प्रभाव पड़ता है। भूख बढ़ती है एवं पाचक रसों का स्राव बढ़ता है। पेट के कृमि इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं एवं कब्जियत मिटती है। इसकी प्रयोज्य मात्रा एक से दो तक की है। इसे पीसकर मिश्री की चासनी या शहद के साथ देते हैं।

लौंग का सबसे बड़ा गुण है - रक्त श्वेत कणों को बढ़ाना व जीवनी शक्ति के लिये उत्तरदायी कोषों का पोषण करना। इसी विशेष गुण के कारण इसे क्षय रोग एवं ज्वर आदि में एण्टीबायोटिक की तरह प्रयुक्त किया जाता है। वायु नलिकाओं को फैलाकर श्वास-अवरोध को मिटाने वाले कफ निस्तारक गुण के कारण यह दमा रोग में बड़ी लाभकारी है। यह रक्त शोधक एवं मूत्रल है। फोड़े-फुंसियों या त्वचा सूजन में इसका चन्दन के साथ लेप करने से वेदना मिटती है एवं व्रण जल्दी भरता है। लौंग चिरायता समान भाग पानी में पीसकर शहद के साथ पिलाने से ज्वर उतर जाता है। लौंग को जल में पीसकर गर्म करके ललाट व कनपटियों पर लेप करने से स्नायु जन्य सिर दर्द-तनाव मिटाता है। श्वास की दुर्गन्ध इससे मिटती है। खाँसी में लौंग को ठण्डे पानी में पीसकर, छानकर मिश्री मिलाकर एवम् आग पर भूनकर शहद में मिलाकर चाटते हैं। वस्तुतः लौंग बड़ी गुणकारी औषधि है, उसे सीमित मात्रा में निर्धारित अनुपान के साथ प्रयुक्त किया जाए।

(२३) **तेज पत्रक :-** इसे तेजपात भी कहते हैं। हमारे यहाँ यह हिमालय में ३ से ८ हजार फीट की ऊँचाई तक पाया जाता है। इसके

२० से ३० फीट ऊँचे वृक्ष होते हैं, जिनके हर अंग से सुगन्ध आती है। इसके पत्ते मसालों के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इसकी मात्रा पत्र चूर्ण चार माशा की है।

तेजपात कफ रोगों के लिये बड़ी उपयोगी वस्तु है। गरम व खुश्क, यह औषधि पिप्पली चूर्ण की एक ग्राम मात्रा में शहद के साथ लेने पर खाँसी व जुकाम को मिटाती है। अदरक के रस के साथ अथवा अदरक के मुरब्बे की चासनी के साथ इसके पत्तों का चूर्ण लेने पर दमे का प्रकोप मिटता है।

पेट के वायु विकारों में, दस्त अधिक लगने की स्थिति में, अजीर्ण में इसका काढ़ा पिलाते हैं। मधुमेह में भी इसे उपयोगी पाया गया है। प्रसूति के पश्चात् इसका चूर्ण या काढ़ा देने से अधिक रक्तस्राव एवम् सेप्टिक होने के अवसर कम होते हैं। मासिक धर्म की अनियमितता इसके प्रयोग से दूर होती है। मुख की दुर्गन्ध इसके प्रयोग से दूर होती है एवम् मसूढ़ों पर मलने से दाँत मजबूत होते हैं। तेजपात के मसालों में प्रयुक्त होने का मूल कारण ही इसका वात, पित्त, कफ नाशक गुण है। साथ ही यह पाचन क्रिया को भी सुव्यवस्थित करता है। इसका नियमित सेवन हर दृष्टि से लाभदायक है।

(२४) दाल चीनी :- इसे दारुसिता अथवा तज भी कहा जाता है। इसके पत्तों में एक अन्य वृक्ष की मिलावट अक्सर हो जाती है। महाराष्ट्र व गुजरात में इसे तज नाम से ही जाना जाता है। यह हिमालय क्षेत्र अथवा समुद्री किनारों पर मलेशिया एवं लंका में पैदा होता है। तेजपात की छाल भी दालचीनी में कभी-कभी मिला दी जाती है। छाल कड़वी, चरपरी पर सुगन्धित होती है। चूर्ण की मात्रा ३ से ६ माशे तक एवं तेल की मात्रा ५ बूँद तक प्रयुक्त होती है।

दालचीनी वात, पित्त शामक है। इस गुण के कारण इसे मन्दाग्नि में आमाशय को उत्तेजना देने के लिए, पेट की वायु को निकालने के लिये, मरोड़ एवं वमन बन्द करने के लिये, अतिसार एवं कृमि रोग में

बड़ी सफलता से प्रयुक्त किया जाता है। क्षय रोग के कारण बलगम में खून आना इसके प्रयोग से रुक जाता है। गर्भाशय की शिथिलता में इसका प्रयोग लाभकारी है। दालचीनी मूलतः रक्त शोधक है।

अतिसार में दालचीनी की छाल में ४ से १ के अनुपान में कत्था मिलाकर इस सम्मिश्रण का काढ़ा पिलाने से दस्त बन्द हो जाते हैं। सोंठ व इलायची को समभाग में इसके साथ ५ रत्ती देने पर कब्ज मिटता व भूख बढ़ती है। सोंठ के साथ सर्दी-जुकाम में इसका काढ़ा देते हैं। बहुत अधिक दिनों की खाँसी में दालचीनी, सौंफ, मुलहठी व मुनक्का इन सबको मिलाकर गोली बनाकर लेने से शीघ्र ही आराम मिलता है। इसका तेल सिर दर्द में आराम पहुँचाता है। दाँत के दर्द में इसके तेल का फाया बनाकर लगाने से आराम होता है। गर्भवती स्त्रियों को इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

दालचीनी मसालों में एक सर्वश्रेष्ठ औषधि है, जीवनी शक्तिवर्धक है एवम् नियमित रूप से लेने पर रक्त शोधन करती है। वायरस जन्य रोगों का आक्रमण इसके प्रयोग से नहीं हो पाता।

मसाला वाटिका में प्रयुक्त होने वाली उपर्युक्त सभी औषधियों को जब चिकित्सा प्रयोजन हेतु प्रयुक्त किया जाये, तो हमेशा स्थानीय वैद्य गणों से मात्रा के सम्बन्ध में परामर्श कर लिया जाए। मात्रा की न्यूनाधिकता इन मसालों से शरीर में कोई भी विकृति पैदा कर सकती है। अतः स्वयं चिकित्सा के दर्प में, उपचार में कभी जल्दबाजी नहीं करना चाहिये। प्रस्तुत पुस्तक में जहाँ भी विभिन्न रोगों की चिकित्सा का जिक्र आया है, वहाँ रोग का सही निदान भी एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है, इस बात को ध्यान में रखते हुए सदैव चिकित्सकों-वैद्यगणों से परामर्श कर उपचार का क्रम बनाना चाहिये। यह बात सही है कि ये औषधियाँ रोग निवारक हैं; पर असावधानी से तो अमृत भी विष बन जाते हैं।

शाक वाटिका भी लगायें

सहयोगी उपचार प्रक्रिया के रूप में घरेलू चिकित्सा पद्धति में शाक-सब्जियों का नाम मसालों के साथ ही आता है। इन्हें बड़ी आसानी से घर के आँगन में, लकड़ी की पेटियों या गमलों में उगाया जा सकता है। पोषक, पाचक, रोग निवारक, हर दृष्टि से सब्जियों का कच्चे या उबले रूप में प्रयोग लाभप्रद है। सामान्य जानकारी सभी को इस सम्बन्ध में होनी चाहिए। विस्तार से जानना हो, तो शाक वाटिका पर लिखी पुस्तकों से जानकारी ली जा सकती है।

वस्तुतः पत्तीदार सब्जियाँ मनुष्य के लिए उपयोगी आहार है। चटोरेपन की आदत वालों को कच्चे शाक खाने में कसैले जरूर लगते हैं, पर गुणों की दृष्टि से उनकी उपयोगिता भरपूर है। सलाद कई सभ्य घरों में परोसा जाता है। आहार की प्रकृति परायणता और गुणवत्ता पर जो लोग ध्यान देते हैं, उनकी दृष्टि में कीमती फलों और मेवाओं की तुलना में हरी पत्ती वाले शाकों का महत्त्व किसी प्रकार कम नहीं है।

मेथी, पालक, सहजन के पत्ते, मूली के पत्ते, चौलाई, चने के पत्ते, सरसों का साग, अरबी के पत्ते, धनिया, पुदीना, एवम् अन्य पत्तेदार सब्जियाँ खनिज लवण तथा विटामिंन से भरपूर हैं। इसमें स्वास्थ्यकारक भोज्य पोषक रेशों के अतिरिक्त कुछ उत्तम श्रेणी के प्रोटीन भी पाये जाते हैं। पत्तेदार सब्जियाँ स्वास्थ्यवर्धक तत्त्व प्रदान करती हैं, जो आँखों की गति, आँखों की चमक, त्वचा का चिकनापन, हड्डियों की मजबूती और रक्त की लाली बनाये रखते हैं। भोजन में आवश्यकतानुसार खनिज लवण तथा विटामिन प्राप्त करने का सबसे सरल एवं सस्ता तरीका यह है कि पत्तेदार सब्जियों की एक निश्चित मात्रा प्रतिदिन खायी जाये।

पुरुष एवं बच्चों को प्रतिदिन ४०-५० ग्राम और महिलाओं को प्रतिदिन १०० ग्राम पत्तेदार शाक-सब्जियों का उपयोग किसी न किसी व्यञ्जन के रूप में अवश्य करना चाहिए।

अच्छा हो कि इनमें से जो, जिन्हें रुचे या पचे, वे उन्हें कच्चा ही खायें। जिनकी आदत इसे ग्रहण न करें, वे इन पत्तों को चबाते जायें, रस निगलते जायें और छूछ को उगलते जायें। इस प्रकार उनका रस आसानी से अधिक मात्रा में सेवन किया जा सकता है।

उन्हें उबालना हो तो प्रेशर कुकर में बिना पानी डाले उबाल लें। उनमें स्वयं ही इतना पानी होता है कि अलग से और कुछ डालने की आवश्यकता नहीं होती। जो पानी पत्तों से छूट जाए; उसे भी फेंकना नहीं चाहिए, वरन् पी लेना चाहिये।

उपरोक्त पत्तियों में बहुमूल्य पोषक तत्त्व हैं; पर वे इतने कोमल होते हैं कि तेज आग बर्दास्त नहीं कर सकते। भूनने तलने पर या खुले बर्तन में उबालने पर उनमें रहने वाले बहुमूल्य पोषक पदार्थ हवा में उड़ जाते हैं और खाने वाले के हाथ छूछ ही लगती है। जहाँ तक संभव हो, उन्हें कम अग्नितापं दिया जाये।

पत्ती को सलाद की तरह अथवा चूस कर प्रयोग न किया जा सके, तो उन्हें हल्की आग पर प्रेशर कुकर में उबाल कर थोड़ा नमक, जीरा, अदरक, नीबू आदि ऊपर से मिलाकर स्वादिष्ट बनाया जा सकता है। पत्तों को सिल कर पीस पर उनकी चटनी भी बनायी जा सकती है।

आहार में हम अन्न, दूध, शाक, फल आदि को महत्त्व देते हैं, वैसा ही महत्त्व पत्तीदार भाजियों को भी देना चाहिए। विशेषतया गरीब और विचारशील वर्ग के लिये इनकी उपयोगिता समझनी और सेवन की आदत डालनी भी आवश्यक है। जहाँ मसालों का भोजन में महत्त्व है, वहाँ शाक-सब्जियों का ताजे रूप में प्रयोग भी लाभप्रद हैं।

मूल्य- ३.०० रुपये

पता- गायत्री तीर्थ - शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार
(उत्तरांचल) पिन- २४९४११,
फोन (०१३३) ४६०६०२ फैक्स ४६०८६६

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा

गायत्री विद्या सैट

१.	गायत्री साधना और यज्ञ प्रक्रिया	३.००
२.	गायत्री की शक्ति और सिद्धि	३.००
३.	गायत्री की युगांतरीय चेतना	३.००
४.	गायत्री की प्रचंड प्राण ऊर्जा	३.००
५.	गायत्री की उच्चस्तरीय पाँच साधनाएँ	३.००
६.	देवताओं, ऋषियों और अवतारों की उपास्य..	३.००
७.	गायत्री के प्रत्यक्ष चमत्कार	३.००
८.	गायत्री का सूर्योपस्थान	३.००
९.	गायत्री और यज्ञ का अन्योन्याश्रित संबंध	३.००
१०.	गायत्री साधना से कुंडलिनी जागरण	३.००
११.	गायत्री का ब्रह्मवर्चस्	३.००
१२.	गायत्री पंचमुखी और एकमुखी	३.००
१३.	महिलाओं की गायत्री उपासना	३.००
१४.	गायत्री के दो पुण्य प्रतीक-शिखा और सूत्र	३.००
१५.	गायत्री का हर अक्षर शक्ति का स्रोत	३.००
१६.	गायत्री साधना की सर्वसुलभ विधि	३.००
१७.	गायत्री पंचरत्न	३.००
१८.	गायत्री के अनुष्ठान और पुरश्चरण साधनाएँ	३.००
१९.	गायत्री की चौबीस शक्तिधाराएँ	३.००
२०.	गायत्री विषयक शंका समाधान	३.००
२१.	गायत्री का वैज्ञानिक आधार	३.००
२२.	गायत्री महाविज्ञान (प्रथम भाग)	२०.००
२३.	गायत्री महाविज्ञान (द्वितीय भाग)	२०.००
२४.	गायत्री महाविज्ञान (तृतीय भाग)	२०.००

संपर्क सूत्र :

युग निर्माण योजना

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-३

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९



विचार क्रान्ति अभियान
शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार

मूल्य ३·00 रु.